❀ ओ३म् ❀

आर्य सतसंग गुटका

सन्ध्या, प्रार्थनामन्त्र, स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण, प्रधानहवन, संगठन सूक्त, आर्य समाज के नियम और भक्ति रस के मनोहर भजन

क—श्री जगत कुमार शास्त्री

चौथी बार]

[चार आने

* ओ३म् ।

ब्रह्मयज्ञ

[सन्ध्या]

सम्पादक

श्री जगत कुमार शास्त्री

आर्योपदेशक

—***—

एक आना

मुद्रक—रूपवाणी प्रिंटिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली

* ओ३म् *

ब्रह्मयज्ञ अर्थात् सन्ध्या

—❀❀❀—

एकान्त देश में प्राणायाम आदि द्वारा अपने आत्मा, मन और शरीर को शुद्ध व शान्त करके ब्रह्मयज्ञ में प्रवृत्त होना चाहिये।

प्रथम नीचे लिखे मन्त्र से चोटी में गांठ दें।

१. ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

१—हे सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वोत्पादक, प्राप्त करने योग्य, पापनाशक, परमेश्वर हम आपका ध्यान करते हैं। आप हमारी बुद्धि को पवित्र और विकसित करें।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से तीन आचमन करें।

आचमन मन्त्र

२. ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः॥

२—सर्व प्रकाशक और सर्व व्यापक परमेश्वर सब शुभ कर्मों में हमारा सहायक हो और हम पर सब ओर से निरन्तर सुख की वर्षा करता रहे।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से इन्द्रियस्पर्श करें।

इन्द्रियस्पर्श मन्त्र

३. ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुः चक्षुः। ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्।

ओं कण्ठः । ओं शिरः । ओं बाहुभ्यां यशोबलम् । ओं करतलकरपृष्ठे ॥

३—हे प्रभो ! आपकी कृपा से मेरी वाणी, प्राण, आँखें, कान, नाभि, हृदय, कण्ठ, शिर, भुजाएँ और हाथ अर्थात् सब इन्द्रियाँ बल और यश से युक्त हों ।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से मार्जन करें ।

मार्जन मन्त्र

४. ओं भूः पुनातु शिरसि । ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः । ओं स्वः पुनातु कण्ठे । ओं महः पुनातु हृदये । ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । ओं तपः पुनातु पादयोः । ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र ॥

४—हे प्रभो ! मेरे शिर, नेत्र, कण्ठ, हृदय, नाभि, पांव और शरीर के सब अवयवों को सब प्रकार से पवित्र कीजिये ।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से तीन प्राणायाम करे ।

प्राणायाम मन्त्र

५. ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः । ओं तपः । ओं सत्यम् ॥

५—हे प्रभो ! आप सत्यस्वरूप, चित्स्वरूप, आनन्द-स्वरूप, महान्, सबके उत्पत्तिकर्ता, तेजस्वी, अविनाशी और सर्वव्यापक हैं ।

अब आगे के मन्त्रों से ईश्वर की बनाई सृष्टि का विचार करें ।

अघमर्षण मन्त्राः

६. ओं ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्य जायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥

६—ईश्वर के ज्ञानमय अनन्त सामर्थ्य से ही वेद (ज्ञान और प्रकृति प्रकट हुई । उसी सामर्थ्य से महाप्रलय उत्पन्न हुई । यह जलों से भरा हुआ आकाश भी उसी सामर्थ्य से उत्पन्न हुआ है ।

७. ओं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥२॥

७—जल से भरे आकाश के पश्चात् संवत्सर=सन्धिकाल ऊपर बीता । तब सब चराचर के नियन्ता ईश्वर ने दिन और रात उत्पन्न किये ।

८. ओं सूर्य्या चन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।
दिवञ्च पृथ्वीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ॥३॥

८—सर्वाधार परमात्मा ने सूर्य और चन्द्र को तथा सब प्रकाशमान और प्रकाश रहित लोकलोकान्तरों एवं अन्तरिक्ष को भी पूर्व कल्प के समान ही रचा था ।

पुनः नीचे लिखे मन्त्र को एक बार पढ़ तीन आचमन करें ।

९. ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥

९—अर्थ के लिये देखो संख्या—२ ।

फिर आगे लिखे छः मन्त्रों से सब दिशाओं में ईश्वर की व्यापकता का विचार करें ।

मनसापरिक्रमा मन्त्राः

१०. ओं प्राचीदिगग्नि रधिपतिरसितो रक्षिता-दित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो, नमो रक्षितृभ्यो, नम इषुभ्यो, नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥१॥

१०—हे सर्वज्ञ प्रभो ! आप हमारे सम्मुख हैं। सर्वोपरि शासक और रक्षक हैं। आपने ही सूर्य रचा जिसकी किरणों द्वारा पृथ्वी को जीवन प्राप्त होता है। आपको, आपके कार्यों को और आपके साधनों आदि को हम बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो हम से द्वेष करता है या जिससे हम द्वेष करते हैं उसे हम आपकी न्याय व्यवस्था पर ही छोड़ते हैं।

११. ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्योनमोऽधिपतिभ्यो: नमो रक्षि-तृभ्यो, नम इषुभ्यो, नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥२॥

११—हे परमात्मन् ! आप हमारे दक्षिण में विद्यमान हैं। आप ही हमारे राजाधिराज और टेढ़े चलने वाले प्राणियों से हमारी रक्षा करने वाले हैं। ज्ञानियों के द्वारा आप ही हमें ज्ञान देते हैं। आपका०

१२. ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षिता-न्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो, नमो रक्षितृभ्यो, नम इषुभ्यो,नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥३॥

१२—हे सौन्दर्य के भण्डार! आप ही हमारे पीछे हैं। हमारे महाराजा हैं और विषैले प्राणियों से हमारी रक्षा करने वाले हैं। प्राण रक्षा के लिये आपही हमें अन्न दान देते हैं। आपको०

१३. ओं उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो, नमो रक्षितृभ्यो, नम इषुभ्यो, नम एभ्यो अस्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥४॥

१३—हे आनन्द स्वरूप ! आप ही हमारे बाईं ओर हैं। परमस्वामी हैं। स्वयम्भू और हमारे रक्षक हैं। बिजली द्वारा हमारी गति और प्राणों की रक्षा करते हैं। आपको०

१४. ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो, नमो रक्षितृभ्यो, नम इषुभ्यो, नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥५॥

१४—हे सर्व सामर्थ्यवान भगवन् ! आप ही हमारे नीचे की ओर विद्यमान हैं। आप ही हमारे सम्राट हैं। वृक्षों द्वारा आप ही हमारी जीवन रक्षा करते हैं। आपको०

१५. ओं ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो, नमो रक्षितृभ्यो, नम इषुभ्यो, नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥६॥

१५—हे देवाधिदेव! हमारे ऊपर की ओर भी आप ही हैं।

आप पवित्र और हमारे स्वामी हैं। वर्षा द्वारा आप ही हमें जीवन प्रदान करते हैं। आपको०

फिर नीचे लिखे चार मन्त्रों से ईश्वर के तेज स्वरूप का ध्यान करें:—

उपस्थान मन्त्राः

१६. ओं उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥

१६—हे प्रभो! आप अज्ञान और अन्धकार से सर्वथा रहित, सुखस्वरूप, अजर अमर, सब दिव्य गुणों से युक्त, सर्व व्यापक और हमारे जीवन दाता हैं। हम आपको और आपकी दिव्य ज्योति को प्राप्त करने में सफल हों।

१७. ओं उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्॥

१७—हे जगदीश्वर! आप ज्ञान के उत्पादक और प्रकाश के पुञ्ज हैं। संसार के सब पदार्थ आपकी अद्भुत महिमा का परिचय दे रहे हैं।

१८. ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षँ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा॥

१८—हे ईश्वर आप अद्भुत, देवाधिदेव, सर्व-श्रेष्ठ, सर्व-द्रष्टा, सब के प्राप्त करने योग्य और सब के पथ-प्रदर्शक हैं। आपही द्युलोक, पृथ्वीलोक, अन्तरिक्ष और सब जड़-जंगम जगत् की आत्मा हैं। आपको प्राप्त करने का हमारा उद्योग सफल हो।

१९. ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥

१९—हे भक्तवत्सल सर्वद्रष्टा ! आप अनादि काल से अखिल विश्व के हितार्थ विद्यमान हैं । हम आपकी कृपा से सौ वर्ष तक देखें, सुनें, जीवें, बोलें तथा स्वतन्त्र रहें और सौ वर्ष के उपरान्त भी ।

फिर नीचे लिखे गायत्री मन्त्र का जप करें ।

गायत्री मन्त्र

२०. ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।

२०—अर्थों के लिये देखो संख्या—१

फिर नीचे लिखे मन्त्र से ईश्वर को नमस्कार करें ।

नमस्कार मन्त्र

२१. ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च । नमः शंकराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

२१—सुख स्वरूप और सुखदाता परमेश्वर को हम बारम्बार नमस्कार करते हैं ।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इति ब्रह्मयज्ञः ॥

* ओ३म् *

देवयज्ञ

[हवन मन्त्र]

—***—

सम्पादक

श्री जगत कुमार शास्त्री

आर्योपदेशक

—***—

साहित्य मण्डल
दीवानहाल, दिल्ली

दो आने

मुद्रक—रूपवाणी प्रिंटिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाः

ओ३म् । विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥१॥

हिरण्यगर्भःसमवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव । य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४॥

येन द्यौरुग्रा पृथ्वी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥५॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥८॥

अथ स्वस्तिवाचनम्

ओं अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥१॥

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥२॥

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदिति-रनर्वणः । स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावा-पृथिवी सुचेतुना ॥३॥

स्वस्तये वायुमुपब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥४॥

विश्वेदेवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥५॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥६॥

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव । पुनर्दद-ताघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥७॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्ति-भिः सदा नः ॥८॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदिति

रद्रिवर्हाः। उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ॥९॥

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्व-मानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥१०॥

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिहृवृता दधिरे दिवि क्षयम्। तां आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये ॥११॥

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तु विजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगाः नः कर्त्त सुपथा स्वस्तये ॥१३॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः। ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥१४॥

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥१५॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणी-तिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥१७॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्राम- घायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥१८॥

अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मण- स्परि। यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥२०॥

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति। स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥२१॥

स्वस्ति रिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाम- मेति। सा नो अमासो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥२२॥

इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजा- वतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशंसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥२३॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥२४॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम् । देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२५॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥२६॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥२७॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२८॥

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः । वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥३१॥

इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिप्रकरणम्

ओं शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शन्नः पुरन्धिः शमु शन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्य्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२॥

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३॥

शन्नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शन्नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभिवातु वातः ॥४॥

शन्नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥

शन्न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु ॥६॥

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥७॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु । शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥८॥

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥९॥

शन्नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः । शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥१०॥

शं नो देवा विश्वदेवाः भवन्तु श सरस्वती सह धीभिरस्तु । शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥११।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः । शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ता शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२॥

शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः । शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥१३॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥

श नो वातः पवतां शं नस्तपतु सूर्य्यः । शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥ १५ ॥

अहानि शं भवन्तु नः शँ रात्रीः प्रतिधीयताम् । शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥ १६ ॥

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ १७ ॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्ति । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वँ शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि ॥१८॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १९ ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति । दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योति रेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु । यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २२ ॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मेमनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२३॥

यस्मिन्नृचः सामयजूँषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभा विवाराः। यस्मिंश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२४॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

स नः पवस्व शङ्गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः ॥२६॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

इति शान्तिप्रकरणम् ॥

देवयज्ञ अर्थात् हवन

प्रथम तीन मन्त्रों से तीन आचमन करें।

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१॥

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२॥

ओं सत्यं यशः श्रीमयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

तत्पश्चात् इन मन्त्रों से अङ्ग स्पर्श करें।

ओं वाङ्मआस्येऽस्तु—से मुख को ॥ १ ॥

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु—से नाक को ॥ २ ॥

ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु—से आँखों को ॥ ३ ॥

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु—से कानों को ॥ ४ ॥

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु—से बाहों को ॥ ५ ॥

ओं ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु—से दोनों जाँघों को ॥ ६ ॥

ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु—से सब अङ्गों पर जल छिड़कें ॥ ७ ॥

अब नीचे लिखे मन्त्र से कपूर जलावें।

ओं भूर्भुवः स्वः ॥

इस मन्त्र से जलते हुये कपूर को कुण्ड में रखें।

ओं भूर्भुव स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से पंखे द्वारा आग को जलावें।

ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सँ सृजेथामयं च। अस्मिन् सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

फिर तीन समिधा आठ २ अंगुल की घृत में डुबो कर नीचे लिखे मन्त्रों से एक-एक समिधा को अग्नि में डालें।

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥१॥ से पहिला समिधा।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥२॥

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम ॥३॥

से दूसरी समिधा।

ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचायविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदन्न मम ॥४॥

से तीसरी समिधा।

तत्पश्चात् इस मन्त्र से घी की पांच आहुतियाँ दें।

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा इदमग्नये जातवेदसे इदन्नमम ॥

फिर इन मन्त्रों से वेदी के चारों ओर जल छिड़कें।

ओ३म अदितेऽनुमन्यस्व—से पूर्व दिशा में।

ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व— से पश्चिम में।

ओ३म सरस्वत्यनुमन्यस्व— से उत्तर में।

ओ३म् देव सवितः प्रसुव यज्ञं, प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः, पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥

से चारों ओर जल छिड़कें।

अब निम्नलिखित मन्त्रों से दो घृताहुति देवें।

ओ३म् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम ॥१॥

से उत्तर की ओर।

ओ३म सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदन्न मम ॥२॥

से दक्षिण की ओर।

अब नीचे के दो मन्त्रों से मध्य में घृताहुति दें।

ओ३म् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम।१॥

ओ३म् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदन्न मम ॥२॥

नित्यप्रति के हवन में इसके पश्चात् प्रातः काल या सायं काल के मन्त्रों से आहुतियाँ दी जाती हैं परन्तु साप्ताहिक, पाक्षिक वा अन्य विशेष हवनों में प्रातः या सायं की आहुतियों से पूर्व निम्न लिखित मन्त्रों से आहुतियां दें।

ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे इदन्न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्न मम।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमग्नि वाय्वादित्येभ्यः इदन्न मम ॥

तत्पश्चात् निम्न स्विष्टकृत होमाहुति घृत, मिष्ठान्न वा भात से दें। साथ ही सामग्री की आहुतियां भी आरम्भ कर दें।

ओं यदस्य कर्मणोत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वं प्रायश्चित्ताहुतानां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम ॥१॥

फिर नीचे लिखे मन्त्र को मन में बोल के एक आहुति दें।

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥

फिर आगे लिखी चार आहुति द, जो चौल, समावर्त्तन और विवाह में मुख्य हैं।

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्वदुच्छुनां स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥१॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्च-

जन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥२॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मेवर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वाजातानि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम ।४।

फिर निम्न लिखित मन्त्रों से आठ आहुतियां देवें।

ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्याम् इदन्न मम ॥१

ओं स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्यां इदन्न मम॥२॥

ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके स्वाहा॥ इदं वरुणाय इदन्न मम ॥३॥

ओं तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः स्वाहा॥ इदं वरुणाय इदन्न मम ॥४॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे

मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्न मम ॥५॥

ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्व-मयासि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजँ स्वाहा इदमग्नये अयसे इदन्न मम ॥६॥

ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यम् श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च इदन्न मम॥७॥

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञँ हिँ सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा। इदं जातवेदोभ्यां इदन्न मम ॥८॥

फिर निम्न मन्त्रों से प्रातः काल को आहुतियाँ दें।

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥१॥

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥३॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥४॥

इन चार मन्त्रों से सायंकाल का आहुतियाँ दें।

ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥१॥

ओं अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥२॥

ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥३॥

उपरोक्त मंत्र मन में बोलकर

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो

अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥३॥

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥१॥ ...

अग्निर्वेंतु स्वाहा ॥४॥

इन मन्त्रों से दोनों समय आहुतियाँ दें ।

ओ३म् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय, इदन्न मम ॥१॥

ओ३म् भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा । इदं वायवे अपानाय, इदन्न मम ॥२॥

ओ३म् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय, इदन्न मम ॥३॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः, इदन्न मम ॥४॥

ओ३म् आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥५॥

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाऽग्नेमेधाविनं कुरु स्वाहा ॥६॥

ओ३म् विश्वानि देवसवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ॥७॥

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥८॥

इस मन्त्र को तीन बार पढ़ कर तीन आहुतियाँ दें ।

ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ।

इति देवयज्ञः ॥

आर्य संगीतामृत

[१]

हे सप्तभू नवखण्ड रविशशि आदि-आदि चराचरम् ।
विश्वानि देव सदैव देवम् एकमेव गुणागरम् ॥
सर्वस्व जगदाधार जाननहार व्यापक सर्वकम् ।
सवितर् विधाता सर्व अन्त प्रकाशकस्य प्रकाशकम् ॥
प्रभु आप मम त्रय ताप शाप विलाप जग कारण-करण ।
दुरितानि खानि परासुव अथवा व्यथा कीजे हरण ॥
यदि सत्य भद्रम मुक्त पद अङ्कित सुमत चित्त कीजिये ।
कल्याणपद अर्थात् तन्न कृपाल आसुव कीजिये ॥

[२]

हे आनन्द घन चहूँ ओर सुख की वर्षा करो ।
पाप ताप सबदूर नसावो ।
फेरो कृपा दृग कोर ॥ सुख की० ॥
दूर करो शुभ द्युति से अपनी ।
मोह तिमिर घनघोर ॥ सुख की० ॥
सुरभित शीतल धर्म पवन हो ।
उपवन छवि चित चोर ॥ सुख की० ॥
व्रतपति व्रत हम ब्रह्मचर्य का ।
पाल सकें सुकठोर ॥ सुख की० ॥
मातृभूमि सुख संपत साजे ।
विनती यही कर जोर ॥ सुख की० ॥

[३]

अबतो नाथ कीजिये हम को चरण शरण अधिकारी।
अशरण शरण तरुण करुणाघन बरसे अमृत वारी।
होयें निराश नहीं हम चातक मिटे व्यथा यह सारी।
तुम हो दीनबन्धु करुणागर भवसागर भय हारी।
अपनी अटल भक्ति का वर दो प्रभो भक्त हितकारी।
तुमको घट घट में पहिचानें लखि लीला विस्तारी।
धर्म मार्ग पर सदा रहें दृढ़ जीवें पर उपकारी।
भक्ति कुसुम ले मन मन्दिर में पूजा करें तुम्हारी।
स्नेह दीप की द्युत अति उज्वल हरे हृदय अँधियारी।

[४]

भोर भयो पक्षी बन बोलें, उठो जन प्रभु गुण गाओ रे।
लखो प्रभात प्रकृति की शोभा, बार बार हर्षाओ रे॥
प्रभु की दया सुमिरि निज मन में, सरल स्वभाव उपजाओ रे।
हो कृतज्ञ प्रेम में उनके, नयनन नीर बहाओ रे॥
ब्रह्मरूप सागर में मन को, बारम्बार डुबाओ रे।
निर्मल शीतल लहरें ले ले, आत्म-ताप बुझाओ रे॥

[५]

पितु मातु सहायक स्वामी सखा, तुमही इक नाथ हमारे हो।
जिनके कुछ और आधार नहीं, तिनके तुमही रखवारे हो।
सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुख दुर्गुण नाशन हारे हो।
प्रतिपाल करो सगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो।
भुलिहैं हम ही तुमको तुमतो, हमरी सुधि नाही बिसारे हो।
उपकारन का कुछ अन्त नहीं, छिन ही छिन जो बिस्तारे हो।
महाराज महा महिमा तुम्हरी, समझें बिरले बुधवारे हो।
शुभ शान्ति निकेतन प्रेम निधे, मन मन्दिर के उजियारे हो।

यही जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे।
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरी, केहिके अब और सहारे हो॥

[६]

जिस में तेरा नहीं विकास, ऐसा कोई फूल नहीं है। टेक॥
मैं ने देख लिया सब ठौर, तुझ सा मिला न कोई और।
सब का तूही है सिर मौर, इस में कुछ भी भूल नहीं है॥
तुझ से मिलकर करुणाकन्द, मुनिवर पाते हैं आनन्द।
तेरा प्रेम सच्चिदानन्द, किस को मंगल मूल नहीं है॥
उर धर धर्म जीवनाधार, गुरु जन कहें पुकार पुकार।
उसका बेड़ा होगा पार, जिसके तू प्रतिकूल नहीं है॥
तेरा गाये अखिल गुणग्राम, करनी करता है निष्काम।
मन में हे शंकर! सुखधाम, मेरे संशय शूल नहीं है॥

[७]

'ओ३म्' अक्षर अखिलाधार जिसने जान लिया। टेक॥
एक, अखण्ड, अकाय, असंगी, अद्वितीय, अविकार,
व्यापक, ब्रह्म, विशुद्ध, विधाता, विश्व-विश्व भरतार,
को पहचान लिया। ओ३म अक्षर ०
भूतनाथ, भुवनेश, स्वयम्भू, अभय भाव भण्डार,
नित्य निरंजन, न्यायनियन्ता, निर्गुण निगमागार,
मन को मान लिया। ओ३म् अक्षर ०
करुणानन्द, कृपाल, अकर्ता, कर्महीन कर्त्तार,
परमानन्द - पयोधि, प्रतापी, पूरण परमोदार,
से सुखदान लिया। ओ३म् अक्षर०
सर्व शिरोमणि श्री शंकर को, जाना सबका सार,
जिसने जीवन बेड़ा अपना, भव सागर से पार,
करना ठान लिया। ओ३म् अक्षर०

[८]

ओ३म् अनेक बार बोल प्रेम के प्रयोगी। टेक॥
है यही अनादि नाद, निर्विकल्प निर्विवाद,
भूलते न पूज्य पाद, वीतराग योगी। ओ३म्०
वेद को प्रमाण मान, अर्थ योजना बखान,
गा रहे गुणी सुजान, साधु स्वर्ग भोगी। ओ३म्०
ध्यान में धरें विरक्त, भाव से भजें सुभक्त,
त्यागते अघी अशक्त पोच पाप रोगी। ओ३म्०
शंकरादि नित्य नाम, जो जपे विसार काम,
तो बने विवेक धाम, मुक्ति क्यों न होगी। ओ३म्०

[९]

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन, उसे कोई कलेश लगा न रहा।
जब ज्ञान की गंगा में नहाया, तो मन में मैल जरा न रहा।
परमात्मा को जब आत्मा में, लिया देख ज्ञान की आँखों से।
प्रकाश हुआ मन में उसके, कोई उससे भेद छिपा न रहा।
पुरुषाथ ही इस दुनिया में सब कामना पूरी करता है
मन चाहा फल उसने पाया, जो आलसी बन के पड़ा न रहा।
दुखदाई हैं सब शत्रु हैं, यह विषय हैं जितने दुनिना के
वही पार हुआ भवसागार से, जो जाल में इनके फँसा न रहा।
यहाँ वेद विरुद्ध जब मत फैले, प्रकृति की पूजा जारी हुई
जब वेद की विद्या लुप्त हुई फिर ज्ञान का पांव जमा न रहा।
यहाँ बड़े बड़े महाराज हुये, बलवान हुये विद्वान हुये
पर मौत के पंजे से केवल कोई, दुनिया में आके बचा न रहा

[१०]

शरण प्रभु की आवो रे, यही समय है प्यारे॥
आवो प्रभुगुण गावो रे, यही समय है प्यारे॥

उदय हुआ ओ३म् नाम का भानू, आवो दर्शन पावो रे ॥
अमृत झरना झरता है इससे, पी के अमर हो जावो रे ॥
छल कपट और झूठ को त्यागो, सत्य में चित्त लगावो रे ॥
हरि की भक्ति बिन नहीं मुक्ति, दृढ़ विश्वास जमावो रे ॥
करलो नाम प्रभु का सुमिरन, नहीं पीछे पछतावो रे ॥
छोटे बड़े सब मिल के खुशी से, गुण ईश्वर के गावो रे ॥

[११]

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु को धन्यवाद ।
जिसका यश नित गाते हैं, गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥
मन्दिरों में कन्दिरों में पर्वतों के शिखर पर ।
देते हैं लगातार सौ सौ, बार मुनिवर धन्यवाद ॥
करते हैं जगल में मंगल पक्षिगण हर शाख पर ।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥
कूप में तालाब में सागर की गहरी धार में ।
प्रेम-रस में तृप्त हो, करते हैं जल-चर धन्यवाद ॥
शादियों में कीर्तनों में, यज्ञ उत्सव आदि में ।
मीठे स्वर से चाहिये, करें नारि-नर सब धन्यवाद ॥
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर की स्तुति ।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर धर धन्यवाद ॥

[१२]

हे प्रेममय प्रभो ! तुम्हीं सब के आधार हो ।
तुमको परम पिता प्रणाम बार बार हो ॥
ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों ।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो ॥
सन्देश देश देश में वेदों का दें सुना ।
समभाव और प्रेम का सब में प्रसार हो ॥

असहाय के सहाय हों उपकार हम करें।
अभिमान से बचें, हृदय निर्भय उदार हो॥
फूले फले संसार में यह रम्य वाटिका।
कर्त्तव्य का हमको सदा अपने विचार हो॥
स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें।
सेवा में मातृभूमि के तन मन निसार हो।

[१३]

आनन्द रूप भगवन्! किस भाँति तुमको पाऊँ।
तेरे समीप स्वामिन्! मैं किस तरह से आऊँ॥
अनुपम परम छबीले, बिन रंग रस रसीले।
कण्टक सखा है फुलवा, क्या तेरे सर चढ़ाऊँ॥
सुखमूल मुक्ति रूपम, मंगल कुशल स्वरूपम्।
घड़ियाल शंख को क्या सन्मुख तेरे बजाऊं॥
गंगा है तेरी दासी, सेवक है इन्द्र तेरा।
तेरे शरीर पर क्या दो चुल्लू जल चढ़ाऊं॥
छोटे से दास तेरे; रवि चन्द्र हैं उपस्थित।
करते हैं नित उजाला घृत दीप क्या जलाऊँ॥
श्री लक्ष्मी है तेरी निशि दिन चरण की चेरी।
ताँबे का एक पैसा मैं नाथ! क्या दिखाऊं॥
आगम निगम से लेकर मेधा सरस्वती तक।
गुण तेरा गा रहे हैं, क्या गा के मैं रिझाऊं॥
कोटानुकोटि भूमि, उन पर असंख्य प्राणी।
जगदीश अपना नम्बर में कौन सा गिनाऊं॥
विनती 'कशोर' की है निशिदिन यही दया-मय।
हृदय में लौ हो तेरी आँखों में मैं समाऊँ॥

[१४]

मगन ईश्वर की भक्ति में, अरे मन क्यों नहीं होता।
पड़ा आलस्य में मूरख, रहेगा कब तलक सोता॥
जो इच्छा है तेरे कट जायें, सारे मैल पापों के।
प्रभु के प्रेम जल में क्यों नहीं, अपने को तू धोता॥
विषय और भोग में फँस कर, न कर बरबाद जीवन को।
दमन कर चित्त की वृत्ती, लगाले योग में गोता॥
नहीं संसार की वस्तु कोई भी सुख की हेतु है।
वृथा इनके लिये फिर क्यों, समय अनमोल तू खोता॥
धर्म ही एक ऐसा है, जो होगा अन्त को साथी।
न जोरू काम आयेगी न बेटा और कोई पोता॥
भटकता जा बजा नाहक, फिरे सुखके लिये 'सालिग'।
तेरे हृदय के भीतर ही, बहे आनन्द का सोता॥

[१५]

मैया बरस बरस रस वारी।
बूँद बूँद पर तेरी जाऊं बार बार बलिहारी॥ ध्रुव॥
नदी सरोवर सागर बरसे, लागी झरियाँ भारी।
मोरे अँगना क्यों न बरसे, मैं क्या बात बिगारी॥
तू बरसे मैं जी भर नहाऊँ, दोनों भुजा पसारी।
नयन मूँदकर नाचूँ गाऊँ, अपना आप बिसारी॥

[१६]

तेरे दर को छोड़ कर किस दर जाऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है, किसे सुनाऊँ मैं।
जब से याद भुलाई तेरी लाखों कष्ट उठाये हैं,
क्या जानूँ इस जीवन अन्दर कितने पाप कमाये हैं।
हूँ शरमिन्दा आप से क्या बतलाऊँ मैं ॥ तेरे० ॥

मेरे पाप कर्म ही मुझ से प्रीति न करने देते हैं,
कभी जो चाहूँ मिलूँ आपको, रोक मुझे यह लेते हैं।
कैसे स्वामी आपके दर्शन पाऊँ मैं ॥ तेरे० ॥
है तू नाथ वरों का दाता, तुझसे सब वर पाते हैं,
ऋषि मुनि और योगी सारे तेरे ही गुण गाते हैं,
छींटा दे दो ज्ञान का होश में आऊँ मैं ॥ तेरे० ॥
जो बीती सो बीती लेकिन बाकी उम्र सँभालूँ मैं,
प्रेम पाश में बँधा आपके गीत प्रेम के गालूँ मैं,
जीवन प्यारे देश का सफल बनाऊँ मैं ॥ तेरे० ॥

[१७]

अँखियाँ उन दर्शन की प्यासी।
देखन चाहत उन रसनिधि को,
निशि दिन रहत उदासी ॥ अँखियाँ० ॥
पात - पात में जिनकी लीला,
भक्त हृदय के बासी।
जिनके प्रेम फन्द में फँस कर,
छूट जाय सब फाँसी ॥ अँखियाँ० ॥

[१८]

पायें किस प्रकार हम जगदीश दर्शन आपका।
कौन सी ज्योति से हो प्रकाश भगवन् आपका ॥
चांद सूरज आपको प्रकाश कर सकते नहीं,
उनके है प्रकाश का प्रकाश कारण आपका ॥
खींच लेता है यह सारे विश्व की तस्वीर पर।
कर नहीं सकता कदापि मन भी चिन्तन आपका ॥
आप इसकी तो पहुँच से ही परे हैं हे प्रभु।
हो सके क्योंकर भला वाणी से वर्णन आपका ॥

हैं हमारी शक्तियां इस काम में बेअर्थ सब।
है अनुग्रह आपके दर्शन का साधन आपका॥
जड़ जगत तक ही पहुंच कर रह गईं सब इन्द्रियाँ।
रूप क्या अनुभव करें यह शुद्ध चेतन आपका॥
कर्म बल से हीन हूँ मैं तप नहीं भक्ति नहीं।
आ पड़ा किन्तु शरण है मेरा तन मन आपका॥
कीजिये स्वीकार मुझको दीजिये दर्शन दिखा।
आत्मा में हो मेरे अब प्रेम पूर्ण आपका॥
शुद्ध होकर मेरा हृदय आपका मन्दिर बने।
जिससे हो प्रकाश इसमें दुख भंजन आपका॥

[१६]

डग मग डोले दीनानाथ ! नैया भवसागर में मेरी।
मैंने भर-भर जीवन भार, छोड़े तन बोहुत बहु बार॥
पहुँचा एक नहीं उस पार, यह भी काल-चक्र ने घेरी।
मुड़ गया मेरु दंड पतवार, कर पग पाते चल नहीं चार।
सकुचा मन मांझी हिय हार, पूरी दुर्गति रात अँधेरी॥
ऊल अघ, झष, व नक्र भुजंग, झटकें पटकें ताप तरंग।
तरती कर्म-पवन के संग, भरती रहती है चकफेरी॥
ठोकर मरणाचल की खाय, फट कर डूब जायगी हाय।
शंकर अब तो पार लगाय, तेरी मार सहो बहुतेरी॥

[२०]

करिये स्वीकार विनती नाथ हमारी।
आनन्द सुधा बरसाओ, सब के दुःख दूर भगाओ।
कहाओ हरि हितकार, विनती नाथ हमारी॥
गौरव के दिवस दिखाओ, व्रतशील सुबोध बनाओ।
सिखाओ पर उपकार, विनती नाथ हमारी॥

ऋजु पथ पर हमें चलाओ, नित नीके कर्म कराओ।
सुधारो विविध विकार, विनती नाथ हमारी॥
माया मद मोह छुड़ाओ, हम सब को अब अपनाओ।
लगाओ भवनिधि पार, विनती नाथ हमारी॥

[२१]

दयालू नाम है तेरा पिता अब तो दया कीजै।
हरी सब तुमको कहते हैं हमारे दुःख हर लीजै॥
विषय और भोग में निशिदिन फसा रहता है मूरख मन।
इसे अब ज्ञान देकर सत्य मारग पर लगा दीजै॥
बहुत भटका फिरा दर दर शरण तज हे पिता तेरी।
पकड़ कर हाथ अब तो दुख सागर से छुड़ा दीजै॥
तुम्हारी भूल कर महिमा किये अपराध अति भारी।
शरण आये पड़े हैं नाथ अब हम पर कृपा कीजै॥
तुम्हीं माता-पिता सबके तुम्हीं हो नाथ धन विद्या।
तुम्हीं हो मित्र सब जग के दया कर भक्ति वर दीजै॥

[२२]

दुख दूर कर हमारा ससार के रचैया।
जल्दी से दो सहारा मंझधार में है नैया॥
तुम बिन कोई हमारा रक्षक नहीं यहाँ पर।
ढूंढा जहान सारा तुझसा नही रखैया॥
दुनिया में खूब देखा आँखें पसार करके।
साथी नहीं हमारा माँ बाप और भैया॥
सुख के सभी हैं साथी दुनिया के मित्र सारे।
तेरा ही नाम प्यारा दुख दर्द से बचैया॥
दुनियाँ में फंस के हमको हासिल हुआ न कुछ फल।
तेरे बिना हमारा कोई नहीं सुनैया॥

चारों तरफ से हम पर ग़म की घटा है छाई।
सुख का करो उजाला परकाश के करैया॥
अच्छा बुरा है जैसा राजी में राम रहता।
चेरा है यह तुम्हारा सुध लेउ सुध लिवैया॥

[२३]

उठ जाग मुसाफिर भोर भई अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है॥
टुक नींद से अँखियाँ खोल जरा और अपने प्रभुसे ध्यान लगा।
यह प्रीत करन की रीत नहीं प्रभु जागत है तू सोवत है॥
जो कल करना है आज करले जो आज करना है अब करले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया फिर पछताये क्या होवत है॥
नादान भुगत करनी अपनी अय पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पापकी गठरी सीस धरी फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है॥

(२४)

हे जगदीश देव मन मेरा सत्य सनातन धर्म न छोड़े। टेक॥
सुख में तुझको भूल न जावे, नेक न संकट में घबरावे।
धीर कहाय अधीर न होवे, तमक न तार क्षमा का तोड़े॥हे०॥
त्याग जीव के जीवनपथ को, टेढ़ा हाँक न दे तन रथ को।
अति चंचल इन्द्रिय घोड़ों की, भ्रम से उलटी बाग न मोड़े॥हे०॥
होकर शुद्धमहाव्रत धारे, मलिन किसी का माल न मारे।
धार घमण्ड क्रोध पाहन से, हा! न प्रेम रस का घट फोड़े॥हे०॥
ऊँचे विमल विचार बढ़ावे, तप से प्रतिभा ज्ञान बढ़ावे।
हठ तप मान करे विद्या का, शंकर श्रुति का सार निचोड़े॥हे०॥

[२५)

जय जय पिता परम आनन्ददाता।
जगदादि कारण मुक्ति-प्रदाता॥

अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे ।
सृष्टि का स्रष्टा तू धर्त्ता संहारता ।
छोटे से छोटा तू है स्थल इतना ।
कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता ॥
मैं लालित व पालित हूं पितृस्नेह का ।
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझसे ताता ॥
करो शुद्ध निर्मल मेरे आत्मा को ।
करूं मैं विनय नित्य सायं व प्राता ॥
मिटाओ मेरे भय ये आवागमन के ।
फिरूं न जन्म पाता और बिलबिलाता ॥
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु ।
कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता ॥
'अमी' रस पिलाओ कृपा कर के मुझ को ।
रहूं सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता ॥

[२६]

पिताजी तुम पतित उधारन हार । टेक ॥
दीन शरण कंगाल के स्वामी दुख के मोचन हार ।
इस जग माया जाल भ्रमण में सूझे न सार असार ।
सत्य ज्ञान बिन अन्ध सम डोलें करें असत्यअचार ।
पाप प्रवाह भयंकर जल में डूबत हैं मंझधार ।
तुमरी दया बिन को समरथ है करे दीनन को पार ।

[२७]

हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये ।
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिये ॥
ऐसी कृपा और अनुग्रह हम पै हो परमात्मा ।
हों सभासद इस सभा के सब के सब धरमात्मा ॥

वेद के प्रचार में होवें सभी पुरुषार्थी।
होवे आपस में प्रीती और बनें परमार्थी ॥
लोभी औ कामी व क्रोधी कोई भी हममें न हो।
सब व्यसनों से बचें और छोड़ देवें मोह को ॥
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित अपना भारतवर्ष देश।
वायु जल सुखदाई होवें जायँ मिट सारे क्लेश ॥
अच्छी संगत में रहें और वेद मारग पर चलें।
तेरे ही होवें उपासक और कुकर्मों से बचें ॥
कीजिये हम सबका हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों में बढ़ाओ सब का भक्ती दान से ॥

[२८]

हे दयामय ! आपका हमको सदा आधार हो।
आपके भक्तों से ही भरपूर यह परिवार हो ॥
छोड़ देवें काम को और क्रोध को मद-मोह को।
शुद्ध और निर्मल हमारा सर्वदा आचार हो ॥
प्रेम से मिल-मिलके सारे गीत गावें आपके।
दिल में बहता आपका ही प्रेम-पारावार हो ॥
जय पिता जय-जय पिता, हम जय तुम्हारी गा रहे।
रात दिन घर में हमारे आपकी जयकार हो ॥
पास अपने हो न धन तो उसकी कुछ परवा नहीं।
आपकी भक्ति से ही धनवान् यह परिवार हो ॥

[२६]

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तर्यामी करनी कुछ न करी।
औगुन मोसे बिसरत नाहीं पल छिन घरी-घरी ॥

सब प्रपंच की पोट बाँध कर अपने सीस धरी।
दारा सुत धन मोह लियो है सुध बुध सब बिसरी ॥
सूर पतित को वेग उबारो मेरी नाव भरी ॥

[३०]

तुम हो प्रभु चान्द मैं हूं चकोरा,
तुम हो कमल फूल मैं रस का भौंरा।
ज्योति तुम्हारी का मैं हूँ पतंगा,
आनन्द घन तुम हो मैं बन का मोरा
जैसे है लोहे की चुम्बक से प्रीति,
मुझे खींच लेवे प्रभु प्रेम तोरा।
पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल,
ऐसे ही तड़पाये तेरा बिछोड़ा।
इक बूंद जल का मैं प्यासा हूँ चातक,
करो प्रेम वर्षा हरो ताप मोरा।

[३१]

जयति ओ३म्-ध्वज व्योमविहारी।
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी ॥ध्रुव॥

सत्य सुधा बरसाने वाला, स्नेह लता सरसाने वाला।
साम्य सुमन विकसाने वाला, विश्वविमोहक भवभय हारी ॥
इसके नीचे बढ़ें अभय-मन, सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन।
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन, आलोकित होवें दिशि सारी ॥
इससे सारे-क्लेश शमन हों, दुर्मति दानव द्वेष दमन हों।
अति उज्वल अति पावन मन हों, प्रेम तरंग बहे सुखकारी ॥
इसी ध्वजा के नीचे आकर, ऊँच नीच का भेद भुला कर।
मिले विश्व-मुद मंगल गाकर, पन्थाई पाखंड बिसारी ॥

इस ध्वज को लेकर हम कर में, भर दें वेद ज्ञान घर घर में।
सुभग शान्ति फैले घर घर में, मिटे अविद्या की अँधियारी॥
विश्व प्रेम का पाठ पढ़ावें, सत्य अहिंसा को अपनावें॥
जग में जीवन ज्योति जगावें, त्याग-पूर्ण हो वृत्ति हमारी॥
आर्य जाति का सुयश अक्षय हो, आर्य-ध्वजा की अविचल जय हो।
आर्य-जनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी॥

[३२]

विधाता तू हमारा है, तू ही विज्ञानदाता है।
बिना तेरी दया कोई, नहीं आनन्द पाता है॥
तितिक्षा की कसौटी पर, जिसे तू जाँच लेता है।
उसी विद्याधिकारी को, अविद्या से छुड़ाता है॥
सताता जो न औरों को, न धोखा आप खाता है।
वही सद्भक्त है तेरा, सदाचारी कहाता है॥
सदा जो न्याय का प्यारी, प्रजाको दान देता है।
महाराजा उसी को तू, बड़ा राजा बनाता है॥
तजे जो धर्म को धारा, कुकर्मो की बहाता है।
न ऐसे नीच पापी को, कभी ऊँचा चढ़ाता है॥
स्वयम्भू शंकरानन्दी, तुझे जो जान लेता है।
वही कैवल्य सत्ता की, महत्ता में समाता है॥

[३३]

पिता जी करूँ तुम्हें मैं प्यार।

तुमही देव हमारे मन के, तन के तुम आधार।
फूलों की रज गन्ध तुम्ही हो, विद्या के आगार॥
तरणि तेज के दाता तुम हो, वेदों के सुविचार।
जीवन दीन हीन के हो तुम, सकल जगत के सार॥

भव तापों से तुम्हीं बचाते, करते दया अपार ॥
जल थल नभ में बास तुम्हारा, तन मन में सचार।
सत्ता का है 'सत्य' तुम्हारी, कण कण में विस्तार ॥

[३४]

जलवा कोई देखे अगर इकबार तुम्हारा।
हो जाय हमेशा को खरीदार तुम्हारा ॥
क्यों उसका कोई तार हो बेतार जो कोई।
चिन्तन किया करता है लगातार तुम्हारा ॥
लवलीन हुआ तुममें मिटाकर जो दुई को।
तुम यार उसी के हो वही यार तुम्हारा ॥
किस तरह जमीं चलती हैं सूरज के सहारे।
देखे कोई आलम में चमत्कार तुम्हारा ॥
फूलों की तरह खिलते हैं रातों में सितारे।
आकाश बना गुलशने-बेखार तुम्हारा ॥
बुद्धि की पहुँच से है परे हद तुम्हारी।
हाँ तर्क की सीमा से परे पार तुम्हारा ॥

[३५]

जाति को जीवन दो भगवान् !
आशा का अंकुर उपजा दो, परहित का पीयूष पिला दो
सेवा का सन्मार्ग सुझा दो, साहस का सोपान
जाति को जीवन दो भगवान !
प्रेम एकता का वर-वर दो, ज्ञान उजाला घर घर कर दो
कूट कूट हृदयों में भर दो, स्वाभिमान सम्मान
जाति को जीवन दो भगवान् !
दलितों के अधिकार दिला दो, बिछुड़ों को फिर गले मिला दो
भेद भाव का भूत भगा दो, हों सब लोग समान

जाति को जीवन दो भगवान् !

देश-भक्ति की ज्योति जगा दो, धर्म-धाम का द्वार दिखा दो
कर्मवीर बनना बतला दो, कर दयालुता दान ॥
जाति को जीवन दो भगवान् !

[३६]

प्रभो जागते हुये सदा जो, दूर-दूर तक जाता है।
सोते में भी दिव्य शक्तिमय, कोसों दौड़ लगाता है ॥
दूर-दूर वह जाने वाला, तेजों का भी ज्योति निधान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान ॥
जिसके द्वारा बुद्धिमान सब, नाना कर्त्तब करते हैं।
सत्कर्मों को कर मनीषी, वीर युद्ध में मरते हैं ॥
पूजनीय अतिशय जिसका है, प्रजावर्ग में अद्भुत मान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान ॥
जिसमें धैर्य, शक्ति चिन्तन की, तथा ज्ञान महत्ता भरपूर।
प्राणिमात्र में अमृतमय है, या प्रकाश का बहता पूर ॥
जिसके बिना नहीं चलता है, निश्चय कोई कार्य-विधान।
नित्य युक्त शुभ संकलपों से, वह मन मेरा हो भगवान ॥
अमर तत्व जो त्रयकालों का, भेद यथावत पाता है।
बुद्धि ज्ञान की पाँच इन्द्रियाँ, अहंकार से नाता है ॥
इन्हीं सप्त ऋत्विज का फैला, जिसमें निशिदिन यज्ञ वितान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान ॥
चार वेद निगमागम सारे, ईश ज्ञान के सुन्दर स्रोत।
रथ के पहिये में ज्यों आरे, एवं रहते ओत-प्रोत ॥
जंगम जग का चित्त अचल हो, जिसमें रहता निष्ठावान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान ॥

जो जनकुल को बागडोर से इधर उधर ले जाता है।
चतुर सारथी ज्यों घोड़ों को इच्छित चाल चलाता है॥
सदा प्रतिष्ठित हृदय देश में, विपुल तीव्र गति अजर महान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान॥

[३७]

जब तलक तू हाथ में मन का न मनका लायेगा।
तब तलक इस काठ की माला से क्या फल पायेगा॥
भूल कर अज को अजा का आज लौं चेरा रहा।
क्या इसी पाखण्ड से परमात्मा मिल जायेगा॥
धर्म का धन छोड़ कर पूंजी बटोरी पाप की।
क्या इसी करतूत से धरमात्मा कहलायेगा॥
चाह की चिनगी से चौंका चैन फिर चित्त-को कहाँ।
देख धर कर आग पे पारा न टुक ठहरायेगा॥
दान दीनों को न देकर नाम का दानी बना।
भोग के भूखे वहां जाकर बता क्या खायेगा॥
लोभ लीला के लिये रच रंगशाला राग की।
बोल बहुरंगी रंगीले गीत कब तक गायेगा॥
स्वार्थी उपकार औरों का कभी करता नहीं।
फिर तुझे संसार सारा किस लिये अपनायेगा॥
जो तुझे भाती नहीं सबकी भलाई तो भला।
क्यों न भोले भाइयों को भूल में भरमायेगा॥
प्रेम का जल दे रहा परिवार के आराम को।
फल नहीं देगा किसी दिन फूल कर मुरझायेगा॥
खेल में खोया लड़पकन, भोग में यौवन गया।
भूल में भोगी जरा क्या और जीवन आयेगा॥
दूर प्यारे की पुरी है दिन किनारे आ चुका।

चल नहीं तो इस झमेले में पड़ा पछतायेगा ॥
कण्ठ की घर घर सुनेंगे अन्त को घर के खड़े ।
उस घड़ी 'शंकर' घिरा घर घेर में घबरायेगा ॥

[३८]

जयति जयति जगत जननी ! सकल कलुष हारणी ॥
तू दयामयी निकाम पतित पावनीय नाम ।
हो सदा तुझे प्रणाम, प्रेम पुण्य भारिणी ॥
मातु ! हम अबोध बाल, तू कृपालु सर्व काल ।
काट शीघ्र मोह जाल, दुःख दोष दारिणी ॥
हम अशक्त शक्ति दान, दे कि व्रत करें महान ।
हों स्वदेश भक्ति मान, देवि शक्ति धारिणी ॥
हम अमृत पुत्र वीर, हों कभी नहीं अधीर ।
धर्म हित तजें शरीर, भक्त भय निवारिणी ॥
भारती प्रसून वन, शान्ति का बने सदन ।
वेद सूर्य की किरन, हों प्रकाश कारिणी ॥
भेद भाव जायें भूल, सीस लेहिं चरण धूल ।
तू रहे सदानुकूल, हृदय वर विहारिणी

[३६]

प्रभु जी मेरे तुम ही एक आधार ।
दुःख विनाशक सुख के दाता सबके पालन हार ।
शरण गहूँ प्रभु जाय कहाँ मैं कोई न पूछन हार ॥
तेरा ही मंत्र जपूँ निशिवासर चरणन में सिर डार ।
परम कृपाकर दुखिया मुझको अबतो लीजे उभार ॥
कर स्वीकार चरण में मेरा भक्ति भरा उपहार ।
दया करो प्रभु दीन हूं मैं तव द्वारे रहा पुकार ॥

[४०]

विनती यह है नाथ ! हमारी, अँधयारी मिट जाये सारी।
स्नेहमयी अतिशय उजियारी, राह दिखाये ज्योति तुम्हारी॥
एक मन्त्र में दीक्षित होवें, भेद सभी अब देहिं विसारी।
बनें गुणी जन पद अनुगामी, कर पकरैं जिन लख दुःखारी॥
सत्संगति हो सच्ची मती हो, कर्म होय सब जन उपकारी।
सरस्वती की नव जीवन से, खिली रहे ये नव फुलवारी॥
तेज दण्ड में अजय हमारे, सदा रहे कल्मष संहारी।
सफल काम हो तब करुणा से, ब्रह्मचर्य का व्रत अति भारी॥
तन मन धन सुख सब बिसरावें जन्म भूमि सुख सजे हमारी।
दुख हो सुख हो तुझे न भूलें, तू वत्सल भक्तन भय हारी॥

[४१]

अब बेगि उबारो नाथ ! हाथ तव, लाज हमारी है,
हम डूब रहे मँझधार, हार कर दया पुकारी है॥
हम हैं मति मन्द अज्ञानी, महिमा न तुम्हारी जानी।
फंस विषयों में कर हानि, बहुत ही आयु बिगारी है॥
चहुं ओर निराशा छाई, घन घोर घटा घिर आई।
नहीं तीर परत दिखलाई, एक-प्रभु आस तुम्हारी है॥
रिपु काम क्रोध मद आवें, भय बार बार दिखलावें।
लखि दुबल हमहिं सतावें, स्वामी यह विपदा भारी है॥
नहीं धर्म कर्म कुछ जाने, रहे मोह जाल उलझाने।
हित अहित नहीं पहिचाने, पिता तव पुत्र दुखारी है॥
निज सहज दया दिखलाओ, करुणामय हस्त बढ़ाओ।
अपनी उस गोद बैठाओ, जोकि सब सकट हारी है॥

[४२]

नाम सुनते हैं तेरा रूप दिखाओ तो सही।
सूने मन्दिर में मेरे ज्योति जगाओ तो सही॥
फूल में गन्ध चमक चन्द्र में डाली तूने।
चाह जिनको है तेरी उनमें समाओ तो सही॥
धूल मलमल के अलख द्वार पे जोगी गाते।
अपने गाने की कड़ी कोई सुनाओ तो सही॥
चक्र में घूम चुका चरणों में तेरे आया।
दीन वत्सल हो दया दृष्टि घुमाओ तो सही॥

(४३]

यज्ञ रूप प्रभु हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिये,
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिये।
वेद की बोलें ऋचायें, सत्य को धारण करें,
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें।
अश्वमेधादिक रचायें, यज्ञ पर उपकार को,
धर्म मर्यादा चला कर, लाभ दें संसार को।
नित्य श्रद्धा भक्ति से, यज्ञादि सब करते रहें,
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें।
कामना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की,
भावनायें पूर्ण होवें, यज्ञ से नर नार की।
लाभकारी हों हवन, हर प्राणधारी के लिये,
वायु जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किये।
स्वार्थ भाव मिटे, हमारा, प्रेम-पथ विस्तार हो,
इदं न मम् का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो।
हाथ जोड़ झुकाये मस्तक, वन्दना हम कर रहे,
नाथ करुणा रूप करुणा, आपकी सब पर रहे।

आरती

ओ३म् जय जगदीश हरे, पिता जय जगदीश हरे !
भक्त जनन के संकट, क्षण में दूर करे ॥
जो ध्यावे फल पावे, दुःख विनसे मनका,
सुख सम्पति घर आवे, कष्ट मिटे तनका ॥
मातु पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी,
तुम बिन और न दूजा, आश करूँ जिसकी ॥
तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी,
पार ब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी ॥
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्त्ता ।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्त्ता ॥
तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति ।
किस विधि मिलूँ दयामय तुमको मैं कुमती ॥
दीनबन्धु दुःख हर्ता, तुम रक्षक मेरे ।
करुणा हस्त बढ़ाओ, शरण पड़ा तेरे ॥
विषय विकार मिटाओ, पापहरो देवा ।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा ॥

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ॥

सब वेद पढ़ें सुविचार बढ़ें बल पाये चढ़ें नित उपर को ।
अविरुद्ध रहें ऋजु पन्थ गहें परिवार कहें वसुधा भरको ॥
ध्रुव धर्म धरें, पर दुःख हरें तन त्याग तरें भवसागर को ।
दिन फेर पिता वर दे सविता हम आर्य करें भूमण्डल को ॥

राष्ट्रीय प्रार्थना

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम् । दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशु सप्तिः पुरन्ध्री योषा जिष्णू-रथेष्ठा । सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे न पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् योगक्षेमो न कल्पताम् ।। (यजु अ० २ मंत्र २२)

ब्रह्मन् सुराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेज धारी ।
क्षत्री महारथी हों अरि-दल-विनाश कारी ।।
होवें दुधारी गौवें, पशु अश्व आशुवाही ।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही ।।
बलवान् सभ्य योधा, यजमान पुत्र होवें ।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवें ।।
फल फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी ।
हो योग क्षेम कारी, स्वाधीनता हमारी ।।

—:X:—

हे जगदीश दयालु ब्रह्म प्रभु ! सुनिये विनय हमारी ।
हों ब्राह्मण उत्पन्न देश में धर्म कर्म व्रतधारी ।।
क्षत्रिय हों रणधीर महारथ धनुर्वेद अधिकारी ।
धेनु दूध वाली हों सुन्दर वृषभ तुंग बलधारी ।।
हों तुरंग गति चपल अंगना हों स्वरूप गुण वाली ।
विजयी रथी पुत्र जनपद के रत्न तेज बलशाली ।।
जब ही जब जग करे कामना जलधर जल बरसावें ।
फलें पकें बहु सुखद बनस्पति योग क्षेम सब पावें ।।

संगठन सूक्त ऋग्वेद १० । १६१

—❀✱❀—
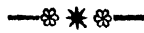
ओ३म् संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥ १ ॥

हे प्रभो तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिये धन वृष्टि को ॥

ओ३म् संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥२ ॥

प्रेम से मिल कर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम कर्तव्य के मानी बनो ॥

ओ३म् समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह-चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥३॥

हों विचार समान सब के चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूं बराबर भोग्य पा सब नेक हों ॥

ओ३म् समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सु सहासति ॥४॥

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से जिस से बढ़े सुख सम्पदा ॥

आर्य समाज के नियम

❀ ❀ ❀

१—सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसीकी उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक, और सामाजिक उन्नति करना।

७—सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

मुद्रक—रूपवाणी प्रिंटिंग हाउस, दरियागंज, दिल्ली